अज्ञेय के उपन्यासों का समीक्षात्मक : एक अध्ययन

डॉ0 रानीबाला गौड,
एसोसिएट प्रोफेसर–हिन्दी विभाग
डी0ए0वी0 स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बुलन्दशहर (उ0प्र0)
सम्बद्ध
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ (उ0प्र0)

गरिमा वर्मा,
शोधछात्रा–हिन्दी,
डी0ए0वी0 स्नातकोत्तर महाविद्यालय बुलन्दशहर (उ0प्र0)
सम्बद्ध
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ (उ0प्र0)

शोध सारांश

अज्ञेय जी के उपन्यास हिन्दी साहित्य आधुनिकता की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं, जो निम्नवत् बताई गई है। सन् 1940 में प्रथम उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' (भाग एक) प्रकाशित हुआ और कुछ ही साल बाद इनका शेखर एक जीवनी (दूसरा भाग) प्रकाशित हुआ। इनके पहले ही उपन्यास से लोगों ने इन्हें पसंद किया। अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' उपन्यास में जितनी चर्चा हुई उतनी किसी अन्य उपन्यास की नहीं हुई 'शेखर एक जीवनी' में शेखर की सृष्टि करते हुए स्वयं अज्ञेय जी ने एक विद्रोही और आंतकवादी व्यक्तित्व की मनोभूमि के आधार पर ही की है। शेखर एक अभिजात वर्ग का प्रतीक पुरुष है। सन् 1951 ई0 में अज्ञेय जी का दूसरा उपन्यास 'नदी के द्वीप' प्रकाशित हुआ। 'नदी के द्वीप' की सबसे बड़ी उपलब्धि आधुनिक नारी के अन्तर्मन की विचार धारणा प्रवृत्तियों एवं भावनाओं का सूक्ष्म विश्लेषण है। इनका तीसरा उपन्यास 'अपने–अपने अजनबी' जो सन् 1961 ई0 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में मृत्युक्षणों के संदर्भ में मानव–मन का विश्लेषण किया गया है। अज्ञेय जी पश्चिम के अस्तित्ववाद से प्रभावित है, और उनका यह तीसरा उपन्यास है 'अपने–अपने अजनबी' पर इसका प्रभाव ज्यादा ही पड़ा है।

Keywords : *शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने अपने अजनबी, संदर्भ।*

'शेखर एक जीवनी', 'पात्र की मनः स्थिति जैसे वातावरण की सृष्टि करेगी कथा को भी वैसा ही बना कर धारण करनी पड़ेगी। अज्ञेय के उपन्यासों में प्रेमचन्द की तरह आदि मध्य और अवसान के मील स्तम्भों की भांति यह नहीं जाना जा सकता कि कथा कितनी आगे बढ़ चुकी है, इस समय वह किस सोपान पर है और अभी उसे कितना चलना है। उनकी कथा के सूत्र समस्त उपन्यास में इधर–उधर बिखरे पड़े हैं। इसका मूल कारण यह है कि उपन्यासकार की दृष्टि केवल चरित्र विश्लेषण पर ही केन्द्रित हो गई है।'

शेखर ईश्वर की मान्यता के खिलाफ विद्रोह करने वाला हिन्दी साहित्य का पहला पढ़ा–लिखा पात्र है। पढ़े–लिखे लोग ज्यादातर कमजोर होते हैं। बालक होते हुए भी ईश्वर को लेकर उसके मन में उठने वाले सवाल स्वाभाविक हैं। पिता की सत्ता की अवहेलना करके शेखर इस नतीजे पर पहुँचता है कि उसके लिए ईश्वर नहीं है। जबकि ईश्वर उसके पिता, उसकी माता और भाइयों–बहनों के लिए हैं। बेंत से पीटने पर वह विश्वास के लिए पिटने का प्रज्ज्वलित आनन्द विजय, आत्मसम्मान कीलहर अनुभव करता है।

इसीका नाम विद्रोह है, जो मनुष्य यथावत्ता से बाहर निकलने के लिए करता है। यह पूरी प्रक्रिया समाज के प्रति समर्पित एक क्रान्तिकारी के बनने की प्रक्रिया है। साहित्य में मात्र समूह की कोई पहचान तब तक नहीं बनती जब तक वह व्यक्ति चरित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं होता। शेखर को जो कुछ भी होना था, उसके जीवन की घटनाओं ने जो रूप धारण किया, वह सब कुछउस रूप में होने के लिये पहले से बाध्य था। पर शेखर के जीवन में जो भी परिस्थितियाँ आई हैं, वे सब शेखर की आन्तरिक मूल प्रकृति की ही उपज ही मालूम पड़ती है। यदि उपन्यास का पात्र शेखर जैसा व्यक्तित्व सम्पन्न व्यक्ति न होता तो परिस्थितियों ने दूसरा रूप धारण किया होता। अहं और भय की प्रेरणाएं शेखर को विद्रोही बनाती हैं या यों कहें कि जन्मना विद्रोही शेखर के मन में अहं और भय की प्रेरणाएँ बहुत प्रबल रूप में विद्यमान है उसका विद्रोह सर्वप्रथम व्यक्त होता है। अपने जीवन को समेटने की बजाय अपने अन्तर्मन को समेटने और अपने प्रति ईमानदार बनने का कार्य किया है। शेखर एक अन्तर्मुख प्रभाव के व्यक्ति हैं, यह अन्तर्मुखता उनके जीवन में बचपन से साथ देती आई है। सभी प्रकार की झंझटों से उसे मुक्त रखती हुई, अपनी पहचान करती हुई यह अन्तर्मुखता उनकी अपनी है।

शेखर एक ललकार या चुनौती का नाम है। पहले–पहले अपने सीमित वातावरण से उसकी ललकार की आवाज गूँजती है, फिर धीरे–धीरे वह विकास प्राप्त करती है तथा बुलन्द होती है। 'शेखर : एक जीवनी' के प्रथम भाग में शेखर की किशोरावस्था का चित्रण हुआ है। दूसरे भाग के अन्त में युवक शेखर की कथा का अंकन भी मिलता है। जीवनी होने के कारण छोटे–मोटे प्रसंगों का भी चित्रण उपन्यासकार ने किया है। इसके लिए अज्ञेय ने अपने जीवन के प्रसंगों से ही सहारा लिया है। 'शेखर : एक जीवनी' का क्रान्तिकारी नायक अपने जीवन में इसी नियति के सूत्र को पहचानने का यत्न करता है– 'जीवन का विज्ञान संगत कार्य–कारण परम्परा प्रौढ़ अज्ञेय के जीवन दर्शन का सूत्र है, जो मैं हूँ वही मैं बन जाऊँ। इसमें और शेखर के नियति दर्शन में अन्तर तो अवश्य होना चाहिए क्योंकि लेखक स्वयं शेखर से अलग खड़ा होकर उसके हेतुवाद की आलोचना तभी करने लगा था।'

शेखर के चरित्र में और भी अनेक विशेषताएँ हैं। वह घोर स्वाभिमानी है। इसका सबसे प्रधान कारण यह है कि वह अन्तिम सीमा तक ईमानदार है। वह अपमान सहकर–चुप नहीं रह सकता, चाहे अपमान करने वाला कोई भी क्यों न हो। अपनी बालसाथी प्रतिमा से उसकी दोस्ती बहुत गहरी होती है, परन्तु उसके घर पर एक बार अपमानित होने पर वह उसे हमेशा के लिए भूल जाता है, जाते–जाते प्रतिशोध लेने से भी बाज नहीं आता। शेखर का स्वाभिमान और अहं उसके बचपन की अनेक घटनाओं में लक्षित होता है। इसलिये शेखर एक उग्र प्रतिशोध और प्रचंड विद्रोही भाव का व्यक्ति है। अज्ञेय की दृष्टि मूलतः कवि दृष्टि होने के नाते खण्डन और चरित्र विधान दृष्टिकोण विस्तृत और कलात्मक रूप में और अधिक से अधिक कोमल भाव व्यंजना में उपजीव्य बना है। वह सरस्वती का उपासक बन जाता है और उसके साथ ऐसे सुख का अनुभव करने लगता है जो साधन की चरम अवस्था में ही सम्भव होता है। 'पाश्चात्य संस्कृति के प्रवेश ने भारतीय जीवन दर्शन को विभिन्न रूपों में प्रभावित किया है। स्वातन्×योत्तर हिन्दी उपन्यासों और उपन्यासकारों पर मार्क्सवादी विचारों मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों व्यक्तिवादी दृष्टिकोणों एवं अस्तित्ववादी प्रभावों से वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विभिन्न प्रतिमानों की अभिव्यक्ति सम्भव हो सकी है। जैनेन्द्र, जोशी, अज्ञेय, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, नरेश मेहता, प्रभाकर माचवे, डॉ0 देवराज, महेन्द्र भल्ला, राजकमल चौधरी, लक्ष्मीकान्त वर्मा, रमेशवक्षी, कृष्णा सोबती,

कमलेश्वर, निर्मलवर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, उदयशंकर भट्ट, ममता कालिया, शरददेवड़ा, द्वारिका प्रसाद, गिरिराजकिशोर इत्यादि व्यष्टिवादी उपन्यासकारों ने पाश्चात्य प्रभावों के परिणामस्वरूप मुख्यतया नैतिकता के वैयक्तिक प्रतिमानों की स्थापना की है।'

शेखर कोई बड़ा आदमी नहीं है, वह अच्छा भी आदमी नहीं है। लेकिन वह मानवताके संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है, वह जागरूक ईमानदार और स्वतन्त्र है। अज्ञेय के कथ्य को समझने के लिए आपको 'शेखर' के संघर्ष से गुजरना होगा जिसकी प्रतीति गहराई से उस रात होती है, जिसके बीतते ही उसे फाँसी पर लटका दिया जायेगा।

'इन मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों से पूर्ववर्ती उपन्यासकारों की यह धारण रही है। कि व्यक्ति के सद् या असद् कृत्यों का निर्धारण उसके बाह्य जीवन की विविध घटनाओं पर होना चाहिए। उन घटनाओं में सुधार लाकर ही हम व्यक्ति के चरित्र का परिशोधन कर सकते हैं, परन्तु मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों ने एक इससे भिन्न और नया धरातल प्रस्तुत किया वह यह था कि मानव मस्तिष्क ही उस कृर्तव्य तथा अकर्तृत्व की शक्ति प्रदान करता है।'

अज्ञेय ने चरित्र के आचरण को समझने के लिए उसके समग्र व्यक्तित्व और संवेदनाओं को आधार बनाया। ये दोनों ही चीजें आतंरिक और गुणात्मक है। प्रेमचन्द के यहाँ चरित्र के इस आयाम को इतना महत्त्व नहीं दिया गया था वहाँ आचरण को सामाजिक परिप्रेक्ष्य से देखा गया और मुख्यचरित्रों का उद्घाटन समाजगत विविध चरित्रों के संदर्भ में किया गया। शेखर का चरित्र विशिष्ट है क्योंकि आतंरिकता के प्रति सजग व्यक्ति की चिन्ता में उसका अस्तित्व प्रधान होता है। शेखर की चिन्ता उसके अपने अस्तित्व की चिन्ता है, शेखर का अस्तित्व ही खतरे में है। शेखर एक विशिष्ट चरित्र है जिसका उद्घाटन हिन्दी उपन्यास को एक नया मोड़ देता है। 'शेखर' में अपने होने की बात तो खुद अज्ञेय स्वीकार करते हैं। आत्मकथात्मक होने के कारण शेखर में लेखक की आत्मकथा का भ्रम होना स्वाभाविक ही है।

शशि और शेखर का प्रेम सम्बन्ध एक ओर अत्यधिक निराला है तथा विशिष्ट है। शशि शेखर का सम्बन्ध उदार और संतुलित ढंग का है। इस सम्बन्ध की विशेषतायें यही सम्भव है कि यह संदर्भ इस प्रेम तक ही सीमित नहीं है। उपन्यास की एक मूल दृष्टि इससे जुड़ी हुई है। तीन पात्रों की तुलना में अधिक प्रासंगिक कहने मात्र से शशि के महत्त्व को समझा नहीं जा सकता। परन्तु इसे अलग ढ़ग से देखना अधिक उचित लगता है। शेखर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व में शशि का अंशदान है। शेखर के रूपायन में शशि की रचनात्मक भूमिका है। 'शेखर एक जीवनी' की प्रतिनिधि नारी पात्र शशि में विवके और अनुराग का अद्भुत मेल है। शशि शेखर से प्रेम करती है लेकिन वह यह नहीं चाहती कि उसकी गृहस्थी टूटे।

'शेखर एक जीवनी' की प्रमुख नारी–पात्र है शशि, जो शेखर से प्रेम करती है। यह सामाजिक समस्या भी है। शेखर की दूर के रिश्ते की मौसी विद्यावती की पुत्री है। यह शशि डाक्टर नगेन्द्र, शशि–शेखर के सम्बन्ध को 'बहन के प्रति रति' रहकर भी प्रेमी के हृदय में सतो गुण ढूंढकर इसका बचाव करना चाहते हैं। ''सच बात तो यह है कि यह सम्बन्ध प्रेमी–प्रेमिका का ही है और शशि के अधर पर अंकित शेखर का चुम्बन अपनी प्रेमिका के अधर पर अंकित किये हुए एक प्रेमी का चुम्बन है। संख्या में वे थोड़े ही हैं, पर जब भी आए हैं शेखर के हृदय में उभड़कर आये हैं। प्रेम के क्षेत्र में चुम्बन न सात्विक होता है और न असात्विक वह केवल चुम्बन होता है।'

शशि और शेखर का यह सम्बन्ध कई मोड़ों से होकर गुजरता है। शशि शेखर की होकर भी उसकी नहीं रहती उसका अनचाहा विवाह किसी और केसाथ हो जाता है। जहाँ उसे न विश्वास मिलता है न प्रेम, न पत्नीत्व यातना, और अपमान में डूबी हुई शशि का प्रत्यावर्तन शेखर के ही पास होता है। इसके बाद शशि अपने पति के हाथों पिटती है, परित्यक्त होती है, शेखर के साथ रहने लगती है और प्रेम के समीर का संस्पर्श उनके जीवन को शीतल करने लगता है, किन्तु संघर्ष के थपेड़ों ने शशि को शारीरिक स्तर पर पूरी तौर पर तोड़ दिया है। शशि मृत्यु की ओर बढ़ती जा रही है, किन्तु जहाँ एक ओर वह शरीर से क्षीण होती जा रही है वहीं मन और आत्मा से अधिक दीप्तिमान शशि का अनुराग शेखर के लिए प्रक्रिया के रूप में है।

शेखर को नारी का प्रथम स्नेह सरस्वती से मिलता है और वह उसे बहिन से सरस्वती और सरस्वती से 'सरस' के रूप में महसूस करने लगता है। सरस्वती शेखर की बड़ी बहन हैं और उसके प्रति घर में सर्वाधिक सहानुभूति रखती है। उसके हर खेल में चाहे व पारिवारिक तौर से हानिकारक क्यों न हो, वह शमिल रहती है। शेखर की जिज्ञासा को तीव्रतर करने में सरस्वती की भूमिका ही जबरदस्त थी। सरस्वती के साथ लगाव को 'मातृरति' के अन्तर्गत रखते हुए विश्लेषण संभव है। परन्तु उसे अधिकाधिक जटिल बनाने का कार्य अज्ञेय ने नहीं किया है। उसके विवाह के पश्चात् शेखर को गहरी ठेस व पीड़ा पहुँचती है। भारतीय वैवाहिक अनुष्ठान के प्रति शेखर की तीव्र वितृष्णा का कारण भी सरस्वती ही थी जिसने इतने बन्धनों से जकड़ दिया कि वह अपने भाई शेखर को भी भूल गयी जो उसके लिये जान से भी प्यारा था। इस प्रकार शेखर के व्यक्तित्व को गति और दिशा देने में सरस्वती की भूमिका महत्त्वपूर्ण थी।

'पात्र सृष्टि के दौरान उनके विकास क्रम के दौरान उपन्यासकार को सामान्यतः मनोवैज्ञानिक तथ्यों का सहारा लेना पड़ा है। प्रेमचन्द ने भी मनोवैज्ञानिक गहराइयों की ओर ध्यान देने की बात कही थी। यह एक सामान्य बात है। यथार्थवादी युग के पश्चात् मनावैज्ञानिक यथार्थवादी युग का प्रारम्भ होता है। उस युग में मनोवैज्ञानिकता का एक अलग अर्थ पहचाना गया।'

'हमारे समाज में स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय है। विशेषकर रूढ़िवादी एवं अशिक्षित लोगों की दृष्टि में तो उनका मूल्य 'जूते की तली' से बढ़कर नहीं होता 'शेखर एक जीवनी' में समाज में स्त्रियों की दशा का सुन्दर चित्रांकन हुआ है।'' मनोवैज्ञानिक चरित्र चित्रण की पहली सीमा उसके विषय अचेतन मन की अतिगूढ़ता और अकथनीयता है, तो दूसरी ओर यह है कि अचेतन का जितना अंश मनोवैज्ञानिक चरित्र चित्रण में निहित होता है इसलिए वह निःसंकोच उन सभी प्रणलियों का प्रयोग करता है जिन्हें एक मनोविश्लेषक अपनाता है।

'नदी के द्वीप' नाम में ही निहित है नदी और द्वीप के सम्बन्ध के बहाने समाज और व्यक्ति के सम्बन्ध को तलाशने की कोशिश ही इस उपन्यास का वर्ण्य विषय है। नदी और द्वीप का यह प्रतीक रेखांकित करता है कि समाज और व्यक्ति के सम्बन्ध नदी तथा द्वीप के सम्बन्ध की तरह होने चाहिए। सबसे बड़ी विशेषता इन स्त्री पात्रों में यह है कि ये इतनी उदार और स्वतन्त्र बोध की है कि ये जो अपने लिए चाहती हैं वही दूसरों के लिए भी।

'अज्ञेय के 'नदी के द्वीप' उपन्यास की गौरा ने माँ–बाप द्वारा आयोजित विवाह को स्वीकार नहीं किया और स्वावलम्बी बनने के लिए नौकरी कर ली, ताकि घर वालों का किसी प्रकार दबाव न रहे और वह घर वालों पर बोझ भी न रहे। पर्याप्त लम्बी प्रतिभा के पश्चात् अन्त में डॉ0

भुवन का उसे पत्र मिलता है, जिसमें उसने गौरा के साथ शीघ्र विवाह–बन्धन में बंध जाने की इच्छा प्रकट की होती है। गौरा इसी पत्र की वर्षों से प्रतीक्षा करती है, क्योंकि वह डॉ भुवन के प्रति आकर्षित थी। उधर परित्यक्ता रेखा भी स्वेच्छा से डॉ0 रमेशचन्द्र से विवाह कर लेती है।' नदी के द्वीप के डॉ0 भुवन काफी आयु के हैं, बिलकुल स्वतन्त्र हैं। रेखा तो स्वच्छन्द सी है।

'नदी के द्वीप' की रेखा, 'डूबते मस्तूल' की रंचना, 'रेखा' की रेखा वर्तमान में ही विश्वास रखती है। साथ–साथ अहं भाव को विकास प्रदान करते हुए 'मुक्तिपथ' के राजीव का अहं अन्ततः सुनन्दा के अह ंके प्रहार से नष्ट होता है। इसके अतिरिक्त ईश्वर भाग्य, पुनर्जन्म, ब्रह्मचर्य पाप–पुण्य, प्रेम और विवाह सम्बन्धी परम्परागत मूल्यों के प्रति अनास्था व्यक्त करते हुए नवीन दृष्टिकोण से विचार हुआ है।'

गौर करें तो पाते हैं कि 'नदी के द्वीप' का प्रेम जिस मोड़ पर खड़ा है, उस मोड़ पर तीनों ही पात्र प्रेम करके दुखी ही रहते हैं। चौथा प्रमुख पात्र चंद्रमाधव भी दुखी है। लेकिन दुख को वे पराजय नहीं मानते। उससे आगे का मार्ग पाने में सहायता लेते हैं। भले ही त्रिकोण का मार्ग और चंद्रमाधव का अलग–अलग हों। पीड़ा से नियोजन के लिये यह विरोध भी आवश्यक हैं। इसके बिना आत्मपीड़न का दर्शन एक बीमारी भर बनकर रह जाता। नदी के द्वीप उपन्यास के पात्र आत्मरूदन की राख से भी शक्ति की चेतना की ओर परिवर्तनशील गति की ज्वाला जलाये रखने में सफल हुए हैं। सबसे पहले भुवन को लेना युक्तिसंगत होगा क्योंकि वही इस उपन्यास की मुख्य रीढ़ है। उपन्यास के समूचे परिदृश्य का नायकत्व उसी के पास है। सही मायने में यथार्थ नायक जो अपनी कमजोरियों को छिपाता नहीं उन पर विजय पाने के लिए प्रयत्नशील रहता है। भुवन जैसा पात्र हिन्दी उपन्यास में कहीं कहीं पर ही मिलते हैं। अपने निजी जीवन में भी दूसरों के लिए एहसास बनाए रखने में कामयाब है। वह अपनी कमजोरियों में गरिमामय है, क्योंकि वह भी बेहद ईमानदार है। अन्य पात्रों की तुलना में चन्द्रमाधव निस्संकोची और दभंग भी है, उसका व्यक्तित्व दूसरे व्यक्तियों को मानने वाला है। तत्कालीन में उसकी आस्था है, इसलिये व्यक्ति, व्यक्तिदर्शन, आत्मदान आदि को वह उड़ा देना चाहता है। रेखा के लिये लिखे पत्र में उसके रुझानों कासही पता चलता है। आत्मपीड़ा का यह बिन्दु रेखा के चरित्र को त्यागमयी बनाता है। चन्द्रमाधव के चरित्र को देखते हुए किसी को एक खलनायकी आभास मिलें तो कोई अत्प्रयाशित बात नहीं है, परन्तु उसकी यह भूमिका खलनायक की नहीं है। उसे एक प्रति चरित्र कहा जा सकता है। रेखा का आत्मदान, गौरा के समर्पण आदि के सम्मुख उसका चरित्र, प्रति चरित्र के समान ही है। भुवन के साथ भी उसका संबन्ध जोड़ा जा सकता है। दोनों ही स्त्री पात्रों का आकर्षण भुवन के प्रति है और विकर्षण चन्द्रमाधव के प्रति भी।

वास्तव में उपन्यास के प्रति चरित्र रेखा और चन्द्रमाधव हैं। यह इसलिए है कि गौरा और भुवन के चरित्र की तुलना इन दोनों में चुनौती हैं दोनों में संघर्ष है पर चन्द्रमाधव का संघर्ष अपनी वासना ग्रस्त मानसिकता से था। इसके लिये उसे संघर्ष तो करना पड़ता है। रेखा का संघर्ष अपने आप में है, अपने अस्तित्व की पूर्णता के लिए है। गौरा उपन्यास की दूसरी नारी पात्र है। तेज तर्रार और भुवन के चिन्तन को आदर्श मानकर चलने वाली उसकी शिष्या गौरा, आरम्भ से ही जिज्ञासु और आत्म–व्यक्तित्व को पहचानने में संलग्न कलाकार की संवेदनीयता से परिचालित रही है। भुवन के प्रसंग में गौरा का चरित्र उसकी शिष्या होने के बावजूद उससे ऊपर उठा हुआ है।

रेखा से भी वह अधिक गंभीर और प्रतीक्षारत है। उससे मिलने के बाद रेखा के चरित्र में जो बदलाव परिलक्षित होता है, उसी की प्रेरणा से वह उसे अपनी माँ की निशानी अंगूठी

गौरा को पहना देती है। वह गौरा के प्रभाव का सूचक है जिसके कारण भुवन को मुक्त करने को बाध्य हो जाती है। उपन्यास की गौरा का चरित्र सही माने में एक भारतीय प्रेम–तपरिवनी का चरित्र है जिसमें मन पहले और शरीर बाद में भुवन के शरीर पर उसे दृढ़ विश्वास है तथा अपने प्रति उसके स्नेह को भी वह जानती है। गौरा का यह उज्ज्वल चरित्र निस्संदेह गहरी बौद्धिक सजगता के साथ आत्म के गहरे मूल्यांकन के फलस्वरूप निर्मित होने के कारण उन्हीं को रास आएगा जो आत्मविस्तार में आस्था रखते हैं।

'अज्ञेय उपन्यास में असाधारण और विशिष्ट पात्रों की स्वीकृति दे रहे हैं; किन्तु इस अनुबन्ध के साथ कि वे पात्र जिस विशिष्ट वर्ग से लिये जाएं उसी के अनुरूप चित्रित हो अर्थात् पात्र की कसौटी उसका प्रकार, वर्ग या 'टाइप' न होकर जीवित पात्रों के साथ उसकी समानता है।'

इस मौलिकता के लिए उपन्यास के तीनों पात्रों ने रेखा, भुवन और गौरा ने ईमानदारी का सहारा लिया है। भुवन, रेखा, बरकस चन्द्र एवं हेमेन्द्र का विरोधी चरित्र उन तीनों को संघर्ष के लिए प्रेरित करता है तीनों ही अपने भीतर झांकते तथा अपना मूल्यांकन करते हैं और अपनी विशिष्टता की छाप छोड़ते हैं। उनकी यह ईमानदारी अपने आपसे है। अपनी आत्मा से है, उपन्यास के पात्र आदर्शवादी हैं। उनका आदर्श अपने होने और अपनी ईमानदारी के प्रति है। 'उपन्यास के पात्र उपन्यासकार की सृष्टि होते हैं, जिनका वह अपनी बुद्धि और कल्पना के अनुसार चयन तथा संगुम्फन करता है, ''बूढ़े बाबा मदनसिंह, फक्कड़ मोहसिन फाँसी पाने वाला राम जी– ये सब नाम सच भी हैं, झूठ भी, क्योंकि अगर काल्पनिक नहीं है तो पात्रान्तरित यानी एक मदनसिंह से भी मेरा परिचय हुआ था, एक मोहसिन से भी, एक राम जी से भी–पर मेरे परिचय के यथार्थ व्यक्ति और मेरी पुस्तक के पात्र अलग–अलग है। इसी चयन के कारण ही साहित्यकार पात्रों का सृजन करता है, चित्रण नहीं। वह किसी का इतिहास प्रस्तुत नहीं करता, पात्रों का निर्माण करता है।'

'अपने अपने अजनबी', 'अपने अपने अजनबी' के पात्रों में अस्तित्व बोध की चरम सीमा में यहाँ सभी एक दूसरे के लिए अजनबी हैं। वे मृत्यु के साक्षात्कार अथवा समाज के साथ एक दूसरे से अजनबी ही रहते हैं। इस उपन्यास में प्रमुख दो ही पात्र है। सेल्मा तथा योके दोनों दो आयुवर्ग और दो विरोधी मानसिकता वाले पात्र हैं, इसीलिए साथ रहकर भी परस्पर अजनबी बने रहते हैं। उपन्यास के आरम्भ में ही ये दोनों पात्र अपनी विशिष्टताओं के साथ मृत्यु बोध का सामना करते हैं। यह अजनबीपन एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने की असमर्थता भी है। आज का युग जाति और संस्कारों के अजनबीपन तथा जीवन के मूल्यों के अजनबी पन से भरा हुआ है। योके और सेल्मा के द्वारा इस अजनबीपन की पूर्णरूप से व्याख्या हुई है। जीवन की अतिरंजित स्थिति का यथार्थ उस उपन्यास के लिए स्वीकृत है। जैसे अचानक कोई परदा गिर गया हो और पात्रों के बीच का सम्बन्ध टूट गया हो यही कहानी उपन्यास की कथात्मक स्थिति की है और पूरा उपन्यास इन दो पात्रों के सहारे चला है। पश्चिमी मानसिकता को प्रतीकवत् करने वाले पात्र हैं और उनकी जीवन स्थितियाँ हैं। योके का अस्तित्व बोध अधिक सघन और गम्भीर है। इसे मृत्यु से चिढ़ है। वह मृत्यु को जीवन का खण्डन और दूसरों की मृत्यु को एक आरोपित भय मानती है। सेल्मा मृत्यु को भी उतना ही महत्व देती है। सेल्मा और योके विशिष्ट पात्र होते हुए भी अपनी विचार–दृष्टियों में दो धाराओं की पोषक है, इसलिए प्रतिनिधि रूप में भी अपनी श्रेष्ठता रखती है। दोनों पात्रों की टकराहट को इसीलिए दृश्य शैली में प्रस्तुत किया गया है कि अनावश्यक वर्णनों से वह बोझिल न हो जाय। काठ की दीवारों के मध्य रहने के लिये मजबूर पात्रों की

मानसिकता का अध्ययन जीवन की सामान्य स्थितियों के संदर्भ में अनुचित प्रतीत हो रहा है। काठ के घर, बर्फानी चट्टाने और कई दिनों तक उनका वहाँ रहना आदि। मिलकर एक अवस्था का चित्रण है और बर्फानी चट्टानें जो कि मृत्यु के प्रतीक के रूप में उस काठ के घर को दबोचे पड़ी है। इन्हीं स्थितियों में ये दोनों पात्र हैं और उनकी न मिलने वाली मानसिकता है। यह अपने–अपने अजनबी में तो मूल संदर्भ बनकर उभरा है। आशय यह है कि अज्ञेय जी ने अस्तित्ववाद को प्रश्नानुकूल दृष्टि से देखा है, जिसका प्रमाण योके का चरित्र–चित्रण है। उपन्यास के रचना–विधान में पश्चिमी पात्रों की वैचारिक टकराहट के बीच भारतीय दर्शन को इससे अधिक रूपायित करने का अवसर मिला योके का चरित्र आत्महत्या के समर्पण में बेबश बना है। योके को बेबश बनाया उसकी अतिशय आत्मसजगता ने विडम्बना यह कि वह आत्मसजगता का त्याग नहीं कर सकती। उसे केवल अपनी स्वतन्त्रता चाहिए। जैसा कि पूरे उपन्यास से स्पष्ट होता है कि न्यास अतिरंजित अवस्था के बीच में परिकल्पित है और पात्रों की स्थितियों को भी उसी अनुपात में संकलित किया है। यथार्थ और मिथ्या का ऐसा सामंजस्य हुआ है कि यह कह पाना कठिन होता है कि कौन सा पक्ष अधिक प्रबल है।

'उपन्यास को थोड़ा गहराई से देखें तो ज्ञात होता है कि इसमें दो विरोधी जीवन दृष्टियों की टकराहट नहीं स्पर्श है। वस्तुतः लेखक की अपनी दृष्टि होती है। जीवन के प्रति उसका लगाव अपने ढंग का होता है। डॉ0 रघुवंश ने भी यही स्वीकार किया है– 'अपने–अपने अजनबी' में मूलतः किश्चियन आस्था और उसी के समानान्तर भारतीय जीवन दृष्टि भी है। इस प्रकार दो विचारधाराओं की इसमें टकराहट नहीं स्पर्श है। 'अपने अपने अजनबीपन' उपन्यास को मृत्यु से साक्षात्कार का आख्यान कहा जा सकता है।'

योके और सेल्मा दोनों का चारित्रिक विकास वैचारिक धरातल पर ही अधिक हुआ है किन्तु सेल्मा से जीवन के वे धरातल भी सामने आते हैं, जो मनुष्य के प्रति निन्दनीय मानी जाने वाली दुर्बलताओं का उद्घाटन कर उसे सहज और साधारण, बल्कि अत्यन्त साधारण नारी का रूप प्रदान करते हैं। दुकान धारिनी के रूप में सेल्मा के चरित्र का यही धरातल उद्घाटित हुआ है। इस उपन्यास के पात्रों की प्रतीकात्मकता उनकी प्रमुख विशेषता है।

'अपने–अपने अजनबी' उपन्यास को टोटेलिटी में रखने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अज्ञेय भारतीय दृष्टि और संदर्भ को परिचय की तुलना में समृद्ध करना चाहते हैं। यह सही है कि अस्तित्ववाद से अज्ञेय ने कुछ बौद्धिक उत्तेजनाएं अवश्य ली हैं किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय परिस्थितियों में अज्ञेय अस्तित्ववाद से कोई बड़ी और अधिक संगत दृष्टि विकसित करना चाहते थे। पूरे उपन्यास में योके और सेल्मा दोनों के चरित्र विश्लेषण और मानसिकता को देखते हुए मुझे तो लगता है।

सन्दर्भ

1. उपन्यासकार अज्ञेय–केदार शर्मा, पृ0 47
2. अज्ञेय – भारतीय साहित्य के निर्माता–रमेश चन्द्र शाह, पृ0 21
3. हिन्दी उपन्यास तीन दशक–डॉ0 राजेन्द्र प्रताप, पृ0 47
4. बीसवीं शताब्दी उपन्यास : नए दो पहलू, डॉ0 श्रीनारायण सिंह, पृ0 40
5. हिन्दी उपन्यासों में नारी–डॉ0 शैल रस्तोगी, पृ0 144
6. हिन्दी की उपन्यास यात्रा–ए0 अरविन्दराक्षण, पृ0 76

7. हिन्दी उपन्यासों में नारी–डॉ0 शैल रस्तोगी, पृ0 145
8. हिन्दी उपन्यासों में मध्यवर्गीय (1936 से 1975) ई0–डॉ0 हेमराज (निर्मम), पृ0 148
9. हिन्दी उपन्यास तीन दशक–डॉ0 राजेन्द्र प्रताप, पृ0 42
10. हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धान्त, नरेन्द्र कोहली, पृ0 172
11. हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धान्त, नरेन्द्र कोहली, पृ0 173
12. हिन्दी कथा साहित्य परख : और पहचान, कुमार कृष्ण, पृ0 37